जयशंकर प्रसाद - आंसू

इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती?

मानस सागर के तट पर
क्यों लोल लहर की घातें
कल कल ध्वनि से हैं कहती
कुछ विस्मृत बीती बातें?

आती हैं शून्य क्षितिज से
क्यों लौट प्रतिध्वनि मेरी
टकराती बिलखाती-सी
पगली-सी देती फेरी?

क्यों व्यथित व्योम गंगा-सी
छिटका कर दोनों छोरें
चेतना तरंगिनी मेरी
लेती हैं मृदल हिलोरें?

बस गयी एक बस्ती हैं
स्मृतियों की इसी हृदय में
नक्षत्र लोक फैला है
जैसे इस नील निलय में।

ये सब स्फुलिंग हैं मेरी
इस ज्वालामयी जलन के
कुछ शेष चिह्न हैं केवल
मेरे उस महा मिलन के।

शीतल ज्वाला जलती हैं
ईधन होता दृग जल का
यह व्यर्थ साँस चल-चल कर
करती हैं काम अनिल का।

बाड़व ज्वाला सोती थी
इस प्रणय सिन्धु के तल में
प्यासी मछली-सी आँखें
थी विकल रूप के जल में।

बुलबुले सिन्धु के फूटे
नक्षत्र मालिका टूटी
नभ मुक्त कुन्तला धरणी
दिखलाई देती लूटी।

छिल-छिल कर छाले फोड़े
मल-मल कर मृदुल चरण से
धुल-धुल कर बह रह जाते
आँसू करुणा के कण से।

इस विकल वेदना को ले
किसने सुख को ललकारा
वह एक अबोध अकिंचन
बेसुध चैतन्य हमारा।

अभिलाषाओं की करवट
फिर सुप्त व्यथा का जगना
सुख का सपना हो जाना
भींगी पलकों का लगना।

इस हृदय कमल का घिरना
अलि अलकों की उलझन में
आँसू मरन्द का गिरना
मिलना निश्वास पवन में।

मादक थी मोहमयी थी
मन बहलाने की क्रीड़ा
अब हृदय हिला देती है
वह मधुर प्रेम की पीड़ा।

सुख आहत शान्त उमंगें

बेगार साँस ढोने में
यह हृदय समाधि बना हैं
रोती करुणा कोने में।

चातक की चकित पुकारें
श्यामा ध्वनि सरल रसीली
मेरी करुणार्द्र कथा की
टुकड़ी आँसू से गीली।

अवकाश भला हैं किसको,
सुनने को करुण कथाएँ
बेसुध जो अपने सुख से
जिनकी हैं सुप्त व्यथाएँ

जीवन की जटिल समस्या
हैं बढ़ी जटा-सी कैसी
उड़ती हैं धूल हृदय में
किसकी विभूति हैं ऐसी?

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति-सी छायी
दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आयी।

मेरे क्रन्दन में बजती
क्या वीणा, जो सुनते हो
धागों से इन आँसू के
निज करुणापट बुनते हो।

रो-रोकर सिसक-सिसक कर
कहता मैं करुण कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी।

मैं बल खाता जाता था
मोहित बेसुध बलिहारी
अन्तर के तार खिंचे थे
तीखी थी तान हमारी

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी सी नीरदमाला,
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला।

घिर जाती प्रलय घटाएँ
कुटिया पर आकर मेरी
तम चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अँधेरी।

बिजली माला पहने फिर
मुसक्याता था आँगन में
हाँ, कौन बरस जाता था
रस बूँद हमारे मन में?

तुम सत्य रहे चिर सुन्दर!
मेरे इस मिथ्या जग के
थे केवल जीवन संगी
कल्याण कलित इस मग के।

कितनी निर्जन रजनी में
तारों के दीप जलाये
स्वर्गंगा की धारा में
उज्जवल उपहार चढायें।

गौरव था , नीचे आये
प्रियतम मिलने को मेरे
मै इठला उठा अकिंचन
देखे ज्यों स्वप्न सवेरे।

मधु राका मुसक्याती थी
पहले देखा जब तुमको
परिचित से जाने कब के

तुम लगे उसी क्षण हमको।

परिचय राका जलनिधि का
जैसे होता हिमकर से
ऊपर से किरणें आती
मिलती हैं गले लहर से।

मै अपलक इन नयनों से
निरखा करता उस छवि को
प्रतिभा डाली भर लाता
कर देता दान सुकवि को।

निर्झर-सा झिर झिर करता
माधवी कुंज छाया में
चेतना बही जाती थी
हो मन्त्र मुग्ध माया में।

पतझड़ था, झाड़ खड़े थे
सूखी-सी फूलवारी में
किसलय नव कुसुम बिछा कर
आये तुम इस क्यारी में।

शशि मुख पर घूँघट डाले
अंचल में चपल चमक-सी
आँखों मे काली पुतली
पुतली में श्याम झलक-सी।

प्रतिमा में सजीवता-सी
बस गयी सुछवि आँखों में
थी एक लकीर हृदय में
जो अलग रही लाखों में।

माना कि रूप सीमा हैं
सुन्दर! तव चिर यौवन में
पर समा गये थे, मेरे
मन के निस्सीम गगन में।

लावण्य शैल राई-सा
जिस पर वारी बलिहारी
उस कमनीयता कला की
सुषमा थी प्यारी-प्यारी।

बाँधा था विधु को किसने
इन काली जंजीरों से
मणि वाले फणियों का मुख
क्यों भरा हुआ हीरों से?

काली आँखों में कितनी
यौवन के मद की लाली
मानिक मदिरा से भर दी
किसने नीलम की प्याली?

तिर रही अतृप्ति जलधि में
नीलम की नाव निराली
कालापानी वेला-सी
हैं अंजन रेखा काली।

अंकित कर क्षितिज पटी को
तूलिका बरौनी तेरी
कितने घायल हृदयों की
बन जाती चतुर चितेरी।

कोमल कपोल पाली में
सीधी सादी स्मित रेखा
जानेगा वही कुटिलता
जिसमें भौं में बल देखा।

विद्रुम सीपी सम्पुट में
मोती के दाने कैसे
हैं हंस न, शुक यह, फिर क्यों
चुगने की मुद्रा ऐसे?

विकसित सरसित वन-वैभव
मधु-ऊषा के अंचल में
उपहास करावे अपना
जो हँसी देख ले पल में!

मुख-कमल समीप सजे थे
दो किसलय से पुरइन के
जलबिन्दु सदृश ठहरे कब
उन कानों में दुख किनके?

थी किस अनंग के धनु की
वह शिथिल शिंजिनी दुहरी
अलबेली बाहुलता या
तनु छवि सर की नव लहरी?

चंचला स्नान कर आवे
चंद्रिका पर्व में जैसी
उस पावन तन की शोभा
आलोक मधुर थी ऐसी!

छलना थी, तब भी मेरा
उसमें विश्वास घना था
उस माया की छाया में
कुछ सच्चा स्वयं बना था।

वह रूप रूप ही केवल
या रहा हृदय भी उसमें
जड़ता की सब माया थी
चैतन्य समझ कर मुझमें।

मेरे जीवन की उलझन
बिखरी थी उनकी अलकें
पी ली मधु मदिरा किसने
थी बन्द हमारी पलकें।

ज्यों-ज्यों उलझन बढ़ती थी
बस शान्ति विहँसती बैठी
उस बन्धन में सुख बँधता
करुणा रहती थी ऐंठी।

हिलते द्रुमदल कल किसलय
देती गलबाँही डाली
फूलों का चुम्बन, छिड़ती
मधुप की तान निराली।

मुरली मुखरित होती थी
मुकुलों के अधर बिहँसते
मकरन्द भार से दब कर
श्रवणों में स्वर जा बसते।

परिरम्भ कुम्भ की मदिरा
निश्वास मलय के झोंके
मुख चन्द्र चाँदनी जल से
मैं उठता था मुँह धोके।

थक जाती थी सुख रजनी
मुख चन्द्र हृदय में होता
श्रम सीकर सदृश नखत से
अम्बर पट भीगा होता।

सोयेगी कभी न वैसी
फिर मिलन कुंज में मेरे
चाँदनी शिथिल अलसायी
सुख के सपनों से तेरे।

लहरों में प्यास भरी है
है भँवर पात्र भी खाली
मानस का सब रस पी कर
लुढ़का दी तुमने प्याली।

किंजल्क जाल हैं बिखरे
उड़ता पराग हैं रूखा

हैं स्नेह सरोज हमारा
विकसा, मानस में सूखा।

छिप गयी कहाँ छू कर वे
मलयज की मृदु हिलोरें
क्यों घूम गयी हैं आ कर
करुणा कटाक्ष की कोरें।

विस्मृति हैं, मादकता हैं
मूचर्छना भरी हैं मन में
कल्पना रही, सपना था
मुरली बजती निर्जन में।

हीरे-सा हृदय हमारा
कुचला शिरीष कोमल ने
हिमशीतल प्रणय अनल बन
अब लगा विरह से जलने।

अलियों से आँख बचा कर
जब कुंज संकुचित होते
धुँधली संध्या प्रत्याशा
हम एक-एक को रोते।

जल उठा स्नेह, दीपक-सा,
नवनीत हृदय था मेरा
अब शेष धूमरेखा से
चित्रित कर रहा अँधेरा।

नीरव मुरली, कलरव चुप
अलिकुल थे बन्द नलिन में
कालिन्दी वही प्रणय की
इस तममय हृदय पुलिन में।

कुसुमाकर रजनी के जो
पिछले पहरों में खिलता
उस मृदुल शिरीष सुमन-सा
मैं प्रात धूल में मिलता।

व्याकुल उस मधु सौरभ से
मलयानिल धीरे-धीरे
निश्वास छोड़ जाता हैं
अब विरह तरंगिनि तीरे।

चुम्बन अंकित प्राची का
पीला कपोल दिखलाता
मै कोरी आँख निरखता
पथ, प्रात समय सो जाता।

श्यामल अंचल धरणी का
भर मुक्ता आँसू कन से
छूँछा बादल बन आया
मैं प्रेम प्रभात गगन से।

विष प्याली जो पी ली थी
वह मदिरा बनी नयन में
सौन्दर्य पलक प्याले का
अब प्रेम बना जीवन में।

कामना सिन्धु लहराता
छवि पूरनिमा थी छाई
रतनाकर बनी चमकती
मेरे शशि की परछाई।

छायानट छवि-परदे में
सम्मोहन वेणु बजाता
सन्ध्या-कुहुकिनी-अंचल में
कौतुक अपना कर जाता।

मादकता से आये तुम
संज्ञा से चले गये थे
हम व्याकुल पड़े बिलखते
थे, उतरे हुए नशे से।

अम्बर असीम अन्तर में
चंचल चपला से आकर
अब इन्द्रधनुष-सी आभा
तुम छोड़ गये हो जाकर।

मकरन्द मेघ माला-सी
वह स्मृति मदमाती आती
इस हृदय विपिन की कलिका
जिसके रस से मुसक्याती।

हैं हृदय शिशिरकण पूरित
मधु वर्षा से शशि! तेरी
मन मन्दिर पर बरसाता
कोई मुक्ता की ढेरी।

शीतल समीर आता हैं
कर पावन परस तुम्हारा
मैं सिहर उठा करता हूँ
बरसा कर आँसू धारा

मधु मालतियाँ सोती हैं
कोमल उपधान सहारे
मैं व्यर्थ प्रतीक्षा लेकर
गिनता अम्बर के तारे।

निष्ठुर! यह क्या छिप जाना?
मेरा भी कोई होगा
प्रत्याशा विरह-निशा की
हम होगे औ' दुख होगा।

जब शान्त मिलन सन्ध्या को
हम हेम जाल पहनाते
काली चादर के स्तर का
खुलना न देखने पाते।

अब छुटता नहीं छुड़ाये
रंग गया हृदय हैं ऐसा
आँसू से धुला निखरता
यह रंग अनोखा कैसा!

कामना कला की विकसी
कमनीय मूर्ति बन तेरी
खिंचती हैं हृदय पटल पर
अभिलाषा बनकर मेरी।

मणि दीप लिये निज कर में
पथ दिखलाने को आये
वह पावक पुंज हुआ अब
किरनों की लट बिखराये।

बढ़ गयी और भी ऊँठी
रूठी करुणा की वीणा
दीनता दर्प बन बैठी
साहस से कहती पीड़ा।

यह तीव्र हृदय की मदिरा
जी भर कर-छक कर मेरी
अब लाल आँख दिखलाकर
मुझको ही तुमने फेरी।

नाविक! इस सूने तट पर
किन लहरों में खे लाया
इस बीहड़ बेला में क्या
अब तक था कोई आया।

उम पार कहाँ फिर आऊँ
तम के मलीन अंचल में
जीवन का लोभ नहीं, वह
वेदना छद्ममय छल में।

प्रत्यावर्तन के पथ में

पद-चिह्न न शेष रहा है।
डूबा है हृदय मरूस्थल
आँसू नद उमड़ रहा है।

अवकाश शून्य फैला है
है शक्ति न और सहारा
अपदार्थ तिरूँगा मैं क्या
हो भी कुछ कूल किनारा।

तिरती थी तिमिर उदधि में
नाविक! यह मेरी तरणी
मुखचन्द्र किरण से खिंचकर
आती समीप हो धरणी।

सूखे सिकता सागर में
यह नैया मेरे मन की
आँसू का धार बहाकर
खे चला प्रेम बेगुन की।

यह पारावार तरल हो
फेनिल हो गरल उगलता
मथ डाला किस तृष्णा से
तल में बड़वानल जलता।

निश्वास मलय में मिलकर
छाया पथ छू आयेगा
अन्तिम किरणें बिखराकर
हिमकर भी छिप जायेगा।

चमकूँगा धूल कणों में
सौरभ हो उड़ जाऊँगा
पाऊँगा कहीं तुम्हें तो
ग्रहपथ मे टकराऊँगा।

इस यान्त्रिक जीवन में क्या
ऐसी थी कोई क्षमता
जगती थी ज्योति भरी-सी।
तेरी सजीवता ममता।

हैं चन्द्र हृदय में बैठा
उस शीतल किरण सहारे
सौन्दर्य सुधा बलिहारी
चुगता चकोर अंगारे।

बलने का सम्बल लेकर
दीपक पतंग से मिलता
जलने की दीन दशा में
वह फूल सदृश हो खिलता!

इस गगन यूथिका वन में
तारे जूही से खिलते
सित शतदल से शशि तुम क्यों
उनमे जाकर हो मिलते?

मत कहो कि यही सफलता
कलियों के लघु जीवन की
मकरंद भरी खिल जायें
तोड़ी जाये बेमन की।

यदि दो घड़ियों का जीवन
कोमल वृन्तों में बीते
कुछ हानि तुम्हारी है क्या
चुपचाप चू पड़े जीते!

सब सुमन मनोरथ अंजलि
बिखरा दी इन चरणों में
कुचलो न कीट-सा, इनके
कुछ हैं मकरन्द कणों में।

निर्मोह काल के काले-
पट पर कुछ अस्फुट रेखा
सब लिखी पड़ी रह जाती

सुख-दुख मय जीवन रेखा।

दुख-सुख में उठता गिरता
संसार तिरोहित होगा
मुड़कर न कभी देखेगा
किसका हित अनहित होगा।

मानस जीवन वेदी पर
परिणय हो विरह मिलन का
दुख-सुख दोनों नाचेंगे
हैं खेल आँख का मन का।

इतना सुख ले पल भर में
जीवन के अन्तस्तल से
तुम खिसक गये धीरे-से
रोते अब प्राण विकल से।

क्यों छलक रहा दुख मेरा
ऊषा की मृदु पलकों में
हाँ, उलझ रहा सुख मेरा
सन्ध्या की घन अलकों में।

लिपटे सोते थे मन में
सुख-दुख दोनों ही ऐसे
चन्द्रिका अँधेरी मिलती
मालती कुंज में जैसे।

अवकाश असीम सुखों से
आकाश तरंग बनाता
हँसता-सा छायापथ में
नक्षत्र समाज दिखाता।

नीचे विपुला धरणी हैं
दुख भार वहन-सी करती
अपने खारे आँसू से
करुणा सागर को भरती।

धरणी दुख माँग रही हैं
आकाश छीनता सुख को
अपने को देकर उनको
हूँ देख रहा उस मुख को।

इतना सुख जो न समाता
अन्तरिक्ष में, जल थल में
उनकी मुट्ठी में बन्दी
था आश्वासन के छल में।

दुख क्या था उनको, मेरा
जो सुख लेकर यों भागे
सोते में चुम्बन लेकर
जब रोम तनिक-सा जागे।

सुख मान लिया करता था
जिसका दुख था जीवन में
जीवन में मृत्यु बसी हैं
जैसे बिजली हो घन में।

उनका सुख नाच उठा है
यह दुख द्रुम दल हिलने से
ऋृंगार चमकता उनका
मेरी करुणा मिलने से।

हो उदासीन दोनों से
दुख-सुख से मेल कराये
ममता की हानि उठाकर
दो रूठे हुए मनाये।

चढ़ जाय अनन्त गगन पर
वेदना जलद की माला
रवि तीव्र ताप न जलाये
हिमकर को हो न उजाला।

नचती है नियति नटी-सी
कन्दुक-क्रीड़ा-सी करती
इस व्यथित विश्व आँगन में
अपना अतृप्त मन भरती।

सन्ध्या की मिलन प्रतीक्षा
कह चलती कुछ मनमानी
ऊषा की रक्त निराशा
कर देती अन्त कहानी।

"विभ्रम मदिरा से उठकर
आओ तम मय अन्तर में
पाओगे कुछ न,टटोलो
अपने बिन सूने घर में।

इस शिथिल आह से खिंचकर
तुम आओगे-आओगे
इस बढ़ी व्यथा को मेरी
रोओगे अपनाओगे।"

वेदना विकल फिर आई
मेरी चौदहो भुवन में
सुख कहीं न दिया दिखाई
विश्राम कहाँ जीवन में!

उच्छ्वास और आँसू में
विश्राम थका सोता है
रोई आँखों में निद्रा
बनकर सपना होता है।

निशि, सो जावें जब उर में
ये हृदय व्यथा आभारी
उनका उन्माद सुनहला
सहला देना सुखकारी।

तुम स्पर्श हीन अनुभव-सी
नन्दन तमाल के तल से
जग छा दो श्याम-लता-सी
तन्द्रा पल्लव विह्वल से।

यह पारावार तरल हो
फेनिल हो गरल उगलता
मथ डाला किस तृष्णा से
तल में बड़वानल जलता।

निश्वास मलय में मिलकर
छाया पथ छू आयेगा
अन्तिम किरणें बिखराकर
हिमकर भी छिप जायेगा।

चमकूँगा धूल कणों में
सौरभ हो उड़ जाऊँगा
पाऊँगा कहीं तुम्हें तो
ग्रहपथ मे टकराऊँगा।

इस यान्त्रिक जीवन में क्या
ऐसी थी कोई क्षमता
जगती थी ज्योति भरी-सी।
तेरी सजीवता ममता।

हैं चन्द्र हृदय में बैठा
उस शीतल किरण सहारे
सौन्दर्य सुधा बलिहारी
चुगता चकोर अंगारे।

बलने का सम्बल लेकर
दीपक पतंग से मिलता
जलने की दीन दशा में
वह फूल सदृश हो खिलता!

इस गगन यूथिका वन में
तारे जूही से खिलते

सित शतदल से शशि तुम क्यों
उनमे जाकर हो मिलते?

मत कहो कि यही सफलता
कलियों के लघु जीवन की
मकरंद भरी खिल जायें
तोड़ी जाये बेमन की।

यदि दो घड़ियों का जीवन
कोमल वृन्तों में बीते
कुछ हानि तुम्हारी है क्या
चुपचाप चू पड़े जीते!

सब सुमन मनोरथ अंजलि
बिखरा दी इन चरणों में
कुचलो न कीट-सा, इनके
कुछ हैं मकरन्द कणों में।

निर्मोह काल के काले-
पट पर कुछ अस्फुट रेखा
सब लिखी पड़ी रह जाती
सुख-दुख मय जीवन रेखा।

दुख-सुख में उठता गिरता
संसार तिरोहित होगा
मुड़कर न कभी देखेगा
किसका हित अनहित होगा।

मानस जीवन वेदी पर
परिणय हो विरह मिलन का
दुख-सुख दोनों नाचेंगे
हैं खेल आँख का मन का।

इतना सुख ले पल भर में
जीवन के अन्तस्तल से
तुम खिसक गये धीरे-से
रोते अब प्राण विकल से।

क्यों छलक रहा दुख मेरा
ऊषा की मृदु पलकों में
हाँ, उलझ रहा सुख मेरा
सन्ध्या की घन अलकों में।

लिपटे सोते थे मन में
सुख-दुख दोनों ही ऐसे
चन्द्रिका अँधेरी मिलती
मालती कुंज में जैसे।

अवकाश असीम सुखों से
आकाश तरंग बनाता
हँसता-सा छायापथ में
नक्षत्र समाज दिखाता।

नीचे विपुला धरणी हैं
दुख भार वहन-सी करती
अपने खारे आँसू से
करुणा सागर को भरती।

धरणी दुख माँग रही हैं
आकाश छीनता सुख को
अपने को देकर उनको
हूँ देख रहा उस मुख को।

इतना सुख जो न समाता
अन्तरिक्ष में, जल थल में
उनकी मुट्ठी में बन्दी
था आश्वासन के छल में।

दुख क्या था उनको, मेरा
जो सुख लेकर यों भागे
सोते में चुम्बन लेकर
जब रोम तनिक-सा जागे।

सुख मान लिया करता था
जिसका दुख था जीवन में
जीवन में मृत्यु बसी हैं
जैसे बिजली हो घन में।

उनका सुख नाच उठा है
यह दुख द्रुम दल हिलने से
श्रृंगार चमकता उनका
मेरी करुणा मिलने से।

हो उदासीन दोनों से
दुख-सुख से मेल कराये
ममता की हानि उठाकर
दो रूठे हुए मनाये।

चढ़ जाय अनन्त गगन पर
वेदना जलद की माला
रवि तीव्र ताप न जलाये
हिमकर को हो न उजाला।

नचती है नियति नटी-सी
कन्दुक-क्रीड़ा-सी करती
इस व्यथित विश्व आँगन में
अपना अतृप्त मन भरती।

सन्ध्या की मिलन प्रतीक्षा
कह चलती कुछ मनमानी
ऊषा की रक्त निराशा
कर देती अन्त कहानी।

"विभ्रम मदिरा से उठकर
आओ तम मय अन्तर में
पाओगे कुछ न,टटोलो
अपने बिन सूने घर में।

इस शिथिल आह से खिंचकर
तुम आओगे-आओगे
इस बढ़ी व्यथा को मेरी
रोओगे अपनाओगे।"

वेदना विकल फिर आई
मेरी चौदहो भुवन में
सुख कहीं न दिया दिखाई
विश्राम कहाँ जीवन में!

उच्छ्वास और आँसू में
विश्राम थका सोता है
रोई आँखों में निद्रा
बनकर सपना होता है।

निशि, सो जावें जब उर में
ये हृदय व्यथा आभारी
उनका उन्माद सुनहला
सहला देना सुखकारी।

तुम स्पर्श हीन अनुभव-सी
नन्दन तमाल के तल से
जग छा दो श्याम-लता-सी
तन्द्रा पल्लव विह्वल से।

सपनों की सोनजुही सब
बिखरें, ये बनकर तारा
सित सरसित से भर जावे
वह स्वर्ग गंगा की धारा

नीलिमा शयन पर बैठी
अपने नभ के आँगन में
विस्मृति की नील नलिन रस
बरसो अपांग के घन से।

चिर दग्ध दुखी यह वसुधा

आलोक माँगती तब भी
तम तुहिन बरस दो कन-कन
यह पगली सोये अब भी।

विस्मृति समाधि पर होगी
वर्षा कल्याण जलद की
सुख सोये थका हुआ-सा
चिन्ता छुट जाय विपद की।

चेतना लहर न उठेगी
जीवन समुद्र थिर होगा
सन्ध्या हो सर्ग प्रलय की
विच्छेद मिलन फिर होगा।

रजनी की रोई आँखें
आलोक बिन्दु टपकाती
तम की काली छलनाएँ
उनको चुप-चुप पी जाती।

सुख अपमानित करता-सा
जब व्यंग हँसी हँसता है
चुपके से तब मत रो तू
यब कैसी परवशता है।

अपने आँसू की अंजलि
आँखो से भर क्यों पीता
नक्षत्र पतन के क्षण में
उज्जवल होकर है जीता।

वह हँसी और यह आँसू
घुलने दे-मिल जाने दे
बरसात नई होने दे
कलियों को खिल जाने दे।

चुन-चुन ले रे कन-कन से
जगती की सजग व्यथाएँ
रह जायेंगी कहने को
जन-रंजन-करी कथाएँ।

जब नील दिशा अंचल में
हिमकर थक सो जाते हैं
अस्ताचल की घाटी में
दिनकर भी खो जाते हैं।

नक्षत्र डूब जाते हैं
स्वर्गंगा की धारा में
बिजली बन्दी होती जब
कादम्बिनी की कारा में।

मणिदीप विश्व-मन्दिर की
पहने किरणों की माला
तुम अकेली तब भी
जलती हो मेरी ज्वाला।

उत्ताल जलधि वेला में
अपने सिर शैल उठाये
निस्तब्ध गगन के नीचे
छाती में जलन छिपाये

संकेत नियति का पाकर
तम से जीवन उलझाये
जब सोती गहन गुफा में
चंचल लट को छिटकाये।

वह ज्वालामुखी जगत की
वह विश्व वेदना बाला
तब भी तुम सतत अकेली
जलती हो मेरी ज्वाला!

इस व्यथित विश्व पतझड़ की
तुम जलती हो मृदु होली
हे अरुणे! सदा सुहागिनि

मानवता सिर की रोली।

जीवन सागर में पावन
बड़वानल की ज्वाला-सी
यह सारा कलुष जलाकर
तुम जलो अनल बाला-सी।

जगद्वन्द्वों के परिणय की
हे सुरभिमयी जयमाला
किरणों के केसर रज से
भव भर दो मेरी ज्वाला।

तेरे प्रकाश में चेतन-
संसार वेदना वाला,
मेरे समीप होता है
पाकर कुछ करुण उजाला।

उसमें धुँधली छायाएँ
परिचय अपना देती हैं
रोदन का मूल्य चुकाकर
सब कुछ अपना लेती हैं।

निर्मम जगती को तेरा
मंगलमय मिले उजाला
इस जलते हुए हृदय को
कल्याणी शीतल ज्वाला।

जिसके आगे पुलकित हो
जीवन है सिसकी भरता
हाँ मृत्यु नृत्य करती है
मुस्क्याती खड़ी अमरता ।

वह मेरे प्रेम विहँसते
जागो मेरे मधुवन में
फिर मधुर भावनाओं का
कलरव हो इस जीवन में।

मेरी आहों में जागो
सुस्मित में सोनेवाले
अधरों से हँसते-हँसते
आँखों से रोनेवाले।

इस स्वप्नमयी संसृत्ति के
सच्चे जीवन तुम जागो
मंगल किरणों से रंजित
मेरे सुन्दरतम जागो।

अभिलाषा के मानस में
सरसिज-सी आँखे खोलो
मधुपों से मधु गुंजारो
कलरव से फिर कुछ बोलो।

आशा का फैल रहा है
यह सूना नीला अंचल
फिर स्वर्ण-सृष्टि-सी नाचे
उसमें करुणा हो चंचल

मधु संसृत्ति की पुलकावलि
जागो, अपने यौवन में
फिर से मरन्द हो
कोमल कुसुमों के वन में।

फिर विश्व माँगता होवे
ले नभ की खाली प्याली
तुमसे कुछ मधु की बूँदे
लौटा लेने को लाली।

फिर तम प्रकाश झगड़े में
नवज्योति विजयिनि होती
हँसता यह विश्व हमारा
बरसाता मंजुल मोती।

प्राची के अरुण मुकुर में
सुन्दर प्रतिबिम्ब तुम्हारा
उस अलस ऊषा में देखूँ
अपनी आँखों का तारा।

कुछ रेखाएँ हो ऐसी
जिनमें आकृति हो उलझी
तब एक झलक! वह कितनी
मधुमय रचना हो सुलझी।

जिसमें इतराई फिरती
नारी निसर्ग सुन्दरता
छलकी पड़ती हो जिसमें
शिशु की उर्मिल निर्मलता

आँखों का निधि वह मुख हो
अवगुंठन नील गगन-सा
यह शिथिल हृदय ही मेरा
खुल जावे स्वयं मगन-सा।

मेरी मानसपूजा का
पावन प्रतीक अविचल हो
झरता अनन्त यौवन मधु
अम्लान स्वर्ण शतदल हो।

कल्पना अखिल जीवन की
किरनों से दृग तारा की
अभिषेक करे प्रतिनिधि बन
आलोकमयी धारा की।

वेदना मधुर हो जावे
मेरी निर्दय तन्मयता
मिल जाये आज हृदय को
पाऊँ मैं भी सहृदयता।

मेरी अनामिका संगिनि!
सुन्दर कठोर कोमलते!
हम दोनों रहें सखा ही
जीवन-पथ चलते-चलते।

ताराओं की वे रातें
कितने दिन-कितनी घड़ियाँ
विस्मृति में बीत गईं वें
निर्मोह काल की कड़ियाँ

उद्वेलित तरल तरंगें
मन की न लौट जावेंगी
हाँ, उस अनन्त कोने को
वे सच नहला आवेंगी।

जल भर लाते हैं जिसको
छूकर नयनों के कोने
उस शीतलता के प्यासे
दीनता दया के दोने।

फेनिल उच्छ्वास हृदय के
उठते फिर मधुमाया में
सोते सुकुमार सदा जो
पलकों की सुख छाया में।

आँसू वर्षा से सिंचकर
दोनों ही कूल हरा हो
उस शरद प्रसन्न नदी में
जीवन द्रव अमल भरा हो।

जैसे जीवन का जलनिधि
बन अंधकार उर्मिल हो
आकाश दीप-सा तब वह
तेरा प्रकाश झिलमिल हो।

हैं पड़ी हुई मुँह ढककर
मन की जितनी पीड़ाएँ

वे हँसने लगीं सुमन-सी
करती कोमल क्रीड़ाएँ।

तेरा आलिंगन कोमल
मृदु अमरबेलि-सा फैले
धमनी के इस बन्धन में
जीवन ही हो न अकेले।

हे जन्म-जन्म के जीवन
साथी संसृति के दुख में
पावन प्रभात हो जावे
जागो आलस के सुख में ।

जगती का कलुष अपावन
तेरी विदग्धता पावे
फिर निखर उठे निर्मलता
यह पाप पुण्य हो जावे।

सपनों की सुख छाया में
जब तन्द्रालस संसृति है
तुम कौन सजग हो आई
मेरे मन में विस्मृति है!

तुम! अरे, वही हाँ तुम हो
मेरी चिर जीवनसंगिनि
दुख वाले दग्ध हृदय की
वेदने! अश्रुमयि रंगिनि!

जब तुम्हें भूल जाता हूँ
कुड्मल किसलय के छल में
तब कूक हूक-सू बन तुम
आ जाती रंगस्थल में।

बतला दो अरे न हिचको
क्या देखा शून्य गगन में
कितना पथ हो चल आई
रजनी के मृदु निर्जन में!

सुख तृप्त हृदय कोने को
ढँकती तमश्यामल छाया
मधु स्वप्निल ताराओं की
जब चलती अभिनय माया।

देखा तुमने तब रुककर
मानस कुमुदों का रोना
शशि किरणों का हँस-हँसकर
मोती मकरन्द पिरोना।

देखा बौने जलनिधि का
शशि छूने को ललचाना
वह हाहाकार मचाना
फिर उठ-उठकर गिर जाना।

मुँह सिये, झेलती अपनी
अभिशाप ताप ज्वालाएँ
देखी अतीत के युग की
चिर मौन शैल मालाएँ।

जिनपर न वनस्पति कोई
श्यामल उगने पाती है
जो जनपद परस तिरस्कृत
अभिशप्त कही जाती है।

कलियों को उन्मुख देखा
सुनते वह कपट कहानी
फिर देखा उड़ जाते भी
मधुकर को कर मनमानी।

फिर उन निराश नयनों की
जिनके आँसू सूखे हैं
उस प्रलय दशा को देखा
जो चिर वंचित भूखे हैं।

सूखी सरिता की शय्या
वसुधा की करुण कहानी
कूलों में लीन न देखी
क्या तुमने मेरी रानी?

सूनी कुटिया कोने में
रजनी भर जलते जाना
लघु स्नेह भरे दीपक का
देखा है फिर बुझ जाना।

सबका निचोड़ लेकर तुम
सुख से सूखे जीवन में
बरसों प्रभात हिमकन-सा
आँसू इस विश्व-सदन में ।